दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

सुरक्षित: 29 जुलाई, 2024
उद्घोषित: 11 सितंबर, 2024

आप.वि.वा. 5351/2017, आप.वि.आ. 20944/2017, आप.वि.आ. 25028/2023 और आप.वि.आ. 25029/2023

कुलदीप कुमार ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री अदित एस. पुजारी और
सुश्री मंतिका वोहरा, अधिवक्तागण।

बनाम

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री अमन उस्मान, अति.लो.अभि. सह श्री विश्वास मिगलानी, श्री अरिजीत मोहन, श्री एकलव्य सिंघल, श्री चांदनी जालहान, सुश्री रेनू दलाल, श्री यजुर वियाद, सुश्री अनुभा चावला और श्री भानु प्रताप शांडिल्य, राज्य की ओर से अधिवक्तागण, सह उप.नि. विनोद भाटी और उप.नि. प्रशांत मलिक, पुलिस थाना-मयूर विहार।

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री अनीश दयाल

निर्णय

न्या. अनीश दयाल

1. यह याचिका 22 मई 2017 के समन आदेश को अभिखंडित करने की मांग करते हुए दायर की गई है, जिसमें याचिकाकर्ता के संबंध में 9 अक्टूबर 2015 की प्राथमिकी संख्या 0659/2015 पुलिस थाना मयूर विहार से भारतीय दंड संहिता, 1860 ("**भा.दं.सं.**") की धाराओं 354/354घ/354क/509/506/34 के तहत अपराधों का संज्ञान लिया गया था। आरोप पत्र 23 जुलाई 2016 को दाखिल किया गया। आक्षेपित आदेश में केवल आरोप-पत्र का संज्ञान लिया गया तथा कहा गया कि यह उस सामग्री के आधार पर था जिसका अध्ययन किया गया था।

तथ्यात्मक पृष्ठभूमि

2. 9 अक्टूबर 2015 को, डीडी नंबर 17क पर 12:50 बजे पुलिस स्टेशन मयूर विहार में दर्ज किया गया कि दो लड़के बीएसईएस कार्यालय में एक महिला कॉलर के साथ दुर्व्यवहार कर रहे थे। जांच अधिकारी कथित घटना स्थल पर पहुंचे और उसी दिन प्रत्यर्थी संख्या 2/शिकायतकर्ता ने शिकायत दर्ज कराई और के. अनिरुद्ध परमार और गिरीश कुमार के खिलाफ भी धारा 354/354डी/34 भा.दं.सं. के तहत 21:05 बजे प्राथमिकी दर्ज की गई। याचिकाकर्ता का नाम उक्त प्राथमिकी में नहीं था

3. प्राथमिकी के अवलोकन से पता चलता है कि प्रत्यर्थी संख्या 2/ शिकायतकर्ता ने कहा है कि 9 अक्टूबर 2015 को, सुबह लगभग 11-11:15 बजे जब वह मयूर विहार स्थित कार्यालय आई तो उसने अपने साथ काम करने वाले गिरीश और अनिरुद्ध को स्कूटी पर खड़े होकर हंसते हुए देखा, जिसे उसने नजरअंदाज कर दिया, क्योंकि वे उसे हमेशा से छेड़ते आए थे। शिकायतकर्ता के अनुसार, थोड़ी देर बाद, दोनों सह-**अभियुक्तों** ने उसे घेर लिया और उसका हाथ पकड़ लिया। इसके बाद, उसने पीसीआर को कॉल किया, लेकिन वह बयान नहीं दे सकी क्योंकि वह घबराई हुई थी। उसने पुलिस थाना में बयान दिया कि अनिरुद्ध और गिरीश लक्ष्मी नगर में 'बिजली बिल वितरक' थे। इसके बाद, 16 नवंबर 2015 को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ('**दं.प्र.सं.**') की धारा 164 के तहत उसका बयान दर्ज किया गया, जहां उसने कहा कि जब उसने कार्यालय में इसकी शिकायत की, तो कर्मचारियों ने कहा कि वे याचिकाकर्ता कुलदीप के भतीजे हैं। उसने आगे कहा कि याचिकाकर्ता कुलदीप डीएसईडब्ल्यूयू का नेता है और उसे केस वापस लेने के लिए धमका रहा है और उसके बेटे का अपहरण करने की भी कोशिश कर रहा है। उसने आगे कहा कि वह पहले सुपरवाइजर थी लेकिन कुलदीप, गिरीश और अनिरुद्ध सहित इन लोगों ने उसका स्थानांतरण करवा दिया था और उसे अपनी नौकरी में परेशानी हो रही थी और वे उसे और उसके बच्चों को धमका रहे थे। तदनुसार, भा.दं.सं. की धारा 354/354घ/354क/509/506/34 के तहत आरोप पत्र दायर किया गया

था। याचिकाकर्ता को 22 सितंबर 2017 के आदेश के माध्यम से जमानत दी गई थी।

4. प्रत्यर्थी संख्या 2/शिकायतकर्ता के अधिवक्ता ने जवाब में कहा कि शिकायतकर्ता एक एकल माँ थी, जो शुरू में अनुबंध के आधार पर 'बिजली बिल वितरक' के रूप में कार्यरत थी और उसके बाद 2013-14 में पर्यवेक्षक के पद पर पदोन्नत हुई थी।याचिकाकर्ता एक राजनीतिक रूप से सक्रिय व्यक्ति था और कंपनी के अधिकारियों पर उसका जबरदस्त प्रभाव था। याचिकाकर्ता की शिकायतकर्ता पर बुरी नजर थी क्योंकि वह अविवाहित (विवाह-विच्छेद उपरान्त) थी। 2014 के दौरान, वह शिकायतकर्ता के पास अभद्र प्रस्तावों के साथ पहुंचा, जिसे शिकायतकर्ता ने अस्वीकार कर दिया। बदले की भावना से, याचिकाकर्ता ने हर उपलब्ध अवसर पर उसे परेशान करना शुरू कर दिया, चाहे प्रत्यक्ष रूप से हो या उसके साथ काम करने वाले अन्य लोगों के माध्यम से। कार्यस्थल पर स्थिति इतनी खराब हो गई कि उसे शिकायत दर्ज न कराने की धमकी दी गई। धमकियों में उसके बच्चों का अपहरण करने तथा उसे बदनाम करने की धमकी भी शामिल थी। शिकायतकर्ता ने 23 जुलाई 2015, 1 सितम्बर 2015 तथा 16 सितम्बर 2015 को अपने वरिष्ठ अधिकारियों से विभिन्न शिकायतें की, परन्तु कोई कार्रवाई नहीं की गई। ये प्राथमिकी दर्ज होने से पहले की बातें हैं।उसने लक्ष्मी नगर कार्यालय से स्थानांतरण के लिए अनुरोध किया था, लेकिन कथित तौर पर याचिकाकर्ता के प्रभाव में उसे एक अन्य स्थान, मयूर विहार शाखा में

स्थानांतरित कर दिया गया। हालाँकि, उसने 3 अक्टूबर 2015 को मयूर विहार शाखा में कार्यभार ग्रहण कर लिया।

<u>याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुतियाँ</u>

5. याचिकाकर्ता के **अधिवक्ता** ने कहा कि याचिकाकर्ता एक वरिष्ठ ट्रेड यूनियन नेता हैं, दिल्ली राज्य विद्युत कर्मचारी संघ ("**डीएसईडब्ल्यूयू**") के महासचिव हैं और मेसर्स बीएसईएस यमुना पावर लिमिटेड के स्थायी कर्मचारी हैं, जहां वे तकनीकी अधिकारी के रूप में काम कर रहे थे। यह कहा गया है कि प्राथमिकी कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ किसी अपराध का खुलासा नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता के अनुसार, उसके और प्रत्यर्थी संख्या 2/शिकायतकर्ता तथा अन्य सह अभियुक्तों सहित कई बीएसईएस कर्मचारियों के बीच कुछ मतभेद उत्पन्न हो गया था; याचिकाकर्ता की प्रत्यर्थी संख्या 2/शिकायतकर्ता के साथ सीमित बातचीत थी।

6. याचिकाकर्ता ने अभिलेख पर अतिरिक्त दस्तावेज प्रस्तुत करने की मांग करते हुए कहा कि आंतरिक शिकायत समिति (आईसीसी) ने 23 अगस्त 2013 को एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की थी और उसके निष्कर्षों के अनुसार याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप साबित नहीं हुए थे। आईसीसी रिपोर्ट की एक प्रति रिकॉर्ड में रखी गई है और उसका अध्ययन किया गया है, जिसमें अनिवार्य रूप से कहा गया है कि जांच में ऐसा कोई साक्ष्य सामने नहीं आया जिससे यह साबित हो

सके कि कुलदीप कुमार या उसके गुर्गों (चम्चों) ने उसके कहने पर यौन संबंध बनाने का प्रयास किया था।

7. ***जॉनसन जैकब बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)*** (2022) 4 एचसीसी (दिल्ली) 223 पर भी भरोसा किया गया है जिसमें इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने कहा है कि यदि विभाग विभागीय कार्यवाही में अपने आरोपों को साबित नहीं कर पाया है, जहां सबूत का बोझ कम है, तो यह मानना तर्कसंगत है कि आपराधिक कार्यवाही में आरोप साबित नहीं होंगे।

8. तथापि, शिकायतकर्ता/प्रत्यर्थी संख्या 2 के अधिवक्ता ने कहा कि उन्होंने आईसीसी के निष्कर्षों के विरुद्ध अपील दायर की है, तथापि, इस संबंध में कई बार स्थगन लिया जा चुका है तथा अपील पर अभी तक कोई निष्कर्ष नहीं आया है।

9. याचिकाकर्ता ने रिकॉर्डिंग की प्रतिलिपियां प्रस्तुत कीं जो शिकायतकर्ता/प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दायर की गई हैं। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने ***राज्य बनाम नितिन*** (2019) एससीसी ऑनलाइन डेल 7239 में इस न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया जहां इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने ऐसी स्थिति में, जहां प्रत्यर्थी का नाम प्राथमिकी में नहीं, बल्कि पांच महीने के अंतराल के बाद दिए गए पूरक बयान में उल्लेखित था, उसे विश्वसनीयता नहीं दी और आरोपमुक्ति को मंजूरी दे दी।

<u>शिकायतकर्ता की ओर से प्रस्तुतियां</u>

10. यहां तक कि 9 अक्टूबर 2015 को घटना के संबंध में बयान देते समय भी उसे बीएसईएस के अन्य अधिकारियों द्वारा धमकाया गया। शिकायतकर्ता ने शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के बीच हुई बातचीत का हवाला दिया, जिससे पता चलता है कि कई लोगों, जिसमें श्री नंदलाल भी शामिल थे, ने शिकायतकर्ता से संपर्क किया और उस पर शिकायत वापस लेने के लिए दबाव डाला गया।

11. वह पुलिस के समक्ष पूरे तथ्य नहीं बता सकी, क्योंकि उस पर लगातार दबाव था, और अंत में उसने याचिकाकर्ता का नाम धारा 164 दं.प्र.सं. के तहत अपने बयान में बताया, जब बंद कमरे में कार्यवाही हुई, और उसने बिना घबराए बयान दिया। न्यायालय ने रिकॉर्ड देखा है, और नोट किया है कि जब दंडाधिकारी के समक्ष उसका बयान दर्ज किया जा रहा था, तो जांच अधिकारी को न्यायाधीश के कक्ष के बाहर प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया था, क्योंकि वह अपनी इच्छा के अनुसार और किसी भी खतरे की आशंका के बिना बयान देना चाहती थी।

12. जवाब के साथ, शिकायतकर्ता ने अपनी कंपनी के वरिष्ठ अधिकारियों, पुलिस की महिला यौन उत्पीड़न समिति की अध्यक्ष और दिल्ली महिला आयोग को की गई विभिन्न शिकायतों की प्रतियां संलग्न कीं। हालाँकि, उसने

कहा कि याचिकाकर्ता के प्रभाव के कारण उसे लगातार प्रताड़ित किया जा रहा है। परिणामस्वरूप, वह अवसाद का इलाज भी करा रही थी, जिसके समर्थन में उसने मेडिकल रिकॉर्ड भी प्रस्तुत किया है।

<u>विश्लेषण</u>

13. प्रतिलिपियों के अवलोकन से पता चलता है कि बातचीत याचिकाकर्ता और उसके सहयोगियों के पेशेवर कदाचार और अभद्रता में लिप्त होने के इर्द-गिर्द घूमती है। इसके अलावा, प्रतिलिपियों में प्रत्यर्थी संख्या 2 के बयानों से पता चलता है कि याचिकाकर्ता और उसके सहयोगियों द्वारा उसकी नौकरी में हस्तक्षेप करने के लिए उसके पद का दुरुपयोग किया गया है। प्रतिलिपियों में, प्रत्यर्थी संख्या 2 उसकी बातचीत की रिकॉर्डिंग का हवाला देती है, जिसके आधार पर यह आरोप लगाया गया है कि वह पदोन्नति के बदले मामले को वापस लेने के लिए सहमत हुई। प्रत्यर्थी संख्या 2 ने कॉल पर मौजूद व्यक्ति को स्पष्ट किया कि ऐसी रिकॉर्डिंग उसे घेरकर और उस पर दबाव डालकर कुछ लोगों के समूह द्वारा प्राप्त की गई थी। प्रत्यर्थी संख्या 2 ने प्रतिलिपियों में कहा है कि इस तरह के अनुचित व्यावसायिक लाभ की मांग उसके द्वारा नहीं की गई थी, बल्कि उसके आसपास के लोगों द्वारा उसे इसकी पेशकश की गई थी और वास्तव में प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा ऐसे प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया गया था।

14. याचिकाकर्ता ने ***जॉनसन जैकब बनाम राज्य*** (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय की समन्वय पीठ के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसने ***आगे आशु सुरेन्द्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई*** (2020) 9 एससीसी 636 और ***राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य*** (2011) 3 एससीसी 581 में उच्चतम न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है, जहां उच्चतम न्यायालय ने माना है कि विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्ति के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को अभिखंडित किया जा सकता है, यदि दोनों कार्यवाहियां तथ्यों के एक ही समूह पर आधारित हैं और विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्ति गुणागुण के आधार पर है।

15. ***जॉनसन जैकब*** (पूर्वोक्त) में दिए गए निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार उद्धृत हैं:

> "*17. राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [राधेश्याम केजरीवाल बनाम. प.बं. राज्य, (2011) 3 एससीसी 581: (2011) 2 एससीसी (आप.) 721] में, जिसे बाद में आशु सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई [आशु सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई, (2020) 9 एससीसी 636] के फैसले द्वारा पुष्टि की गई, जो व्यापक सिद्धांत सामने आए वे इस प्रकार हैं:*
>
> > *"38. इन निर्णयों से जो अनुपात निकाला जा सकता है, उसे मोटे तौर पर इस प्रकार कहा जा सकता है।:*
> >
> > > *i) न्यायनिर्णयन की कार्यवाही और आपराधिक अभियोजन एक साथ शुरू किया जा सकता है।*

ii) आपराधिक अभियोजन शुरू करने से पहले न्यायनिर्णयन कार्यवाही में निर्णय लेना आवश्यक नहीं है।

iii) न्यायनिर्णयन कार्यवाही और आपराधिक कार्यवाही एक दूसरे से स्वतंत्र प्रकृति की होती हैं।

iv) न्यायनिर्णयन कार्यवाही में अभियोजन का सामना कर रहे व्यक्ति के विरुद्ध प्राप्त निष्कर्ष आपराधिक अभियोजन की कार्यवाही पर बाध्यकारी नहीं है।

v) प्रवर्तन निदेशालय द्वारा न्यायनिर्णयन कार्यवाही संविधान के अनुच्छेद 20(2) या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए किसी सक्षम न्यायालय द्वारा अभियोजन नहीं है।

vi) समान उल्लंघन के लिए विचारण का सामना कर रहे व्यक्ति के पक्ष में न्यायनिर्णयन कार्यवाही में निष्कर्ष निष्कर्ष की प्रकृति पर निर्भर करेगा। यदि न्यायनिर्णयन कार्यवाही में दोषमुक्ति तकनीकी आधार पर है न कि गुणागुण पर, तो अभियोजन जारी रह सकता है।

vii) तथापि, दोषमुक्ति के मामले में, जहां आरोप को गुणागुण के आधार पर बिल्कुल भी टिकने योग्य नहीं पाया जाता है और व्यक्ति को निर्दोष पाया जाता है, तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही सेट के आधार पर आपराधिक अभियोजन जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती, अंतर्निहित सिद्धांत आपराधिक मामलों में सबूत के उच्चतर मानक है।"

अंत में यह निष्कर्ष निकाला गया:

39. इसलिए, हमारी राय में, यह तय करना ही मापदंड होगा कि <u>क्या न्यायनिर्णयन की कार्यवाही और अभियोजन पक्ष के आरोप एक समान हैं और न्यायनिर्णयन की कार्यवाही में संबंधित व्यक्ति को दोषमुक्त करना गुणागुण के आधार पर है। यदि गुणागुण के</u>

<u>आधार पर यह पाया जाता है कि न्यायनिर्णयन की कार्यवाही में अधिनियम के प्रावधानों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है,</u> तो संबंधित व्यक्ति का मुकदमा चलाना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग माना जाएगा।

19. अजय कुमार त्यागी मामले का निर्णय [राज्य (एनसीटी दिल्ली) बनाम अजय कुमार त्यागी, (2012) 9 एससीसी 685: (2012) 3 एससीसी (आप.) 1221: (2012) 2 एससीसी (एल एंड एस) 811] अलग-अलग है चूंकि इस प्रस्ताव के साथ कोई विवाद नहीं है कि विभागीय कार्यवाही से दोषमुक्ति करने पर "वास्तव में आपराधिक मुकदमा नहीं चलेगा"। इसका कारण यह है कि विभागीय कार्यवाही कई कारणों से अभिखंडित की जा सकती है, जिसमें कुछ तकनीकी बातें जैसे जांच अधिकारियों की अयोग्यता, प्रक्रियात्मक खामियां, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन आदि शामिल हैं।

20. तथापि, मेरा यह मानना है कि जब विभागीय कार्यवाही और आपराधिक कार्यवाही एक दूसरे की प्रतिरूप होती हैं तथा अभियुक्त को विभागीय जांच में गुणागुण के आधार पर दोषमुक्त किया गया है, न कि किसी छोटी-मोटी तकनीकी या अनियमितताओं के कारण, तो उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर आपराधिक कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती, क्योंकि विभागीय कार्यवाही में सबूत का मानक आपराधिक कार्यवाही में सबूत के मानक से बहुत कम होता है। उच्चतम न्यायालय ने आशु सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई [आशु सुरेंद्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई, (2020) 9 एससीसी 636] में भी यही सिद्धांत निर्धारित किया है।"

(ज़ोर दिया गया)

16. ***रणबीर एस. अरोड़ा बनाम राज्य*** 2014 एससीसी ऑनलाइन डेल 3974 में इस न्यायालय की समन्वय पीठ के निर्णय के मद्देनजर उद्धृत मिसाल

वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं हो सकती है जहां यह देखा गया कि ***राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य*** (पूर्वोक्त) में निर्णय इस अनुपात पर है कि आपराधिक अभियोजन विभागीय कार्यवाही के समान तथ्यों के आधार पर नहीं चल सकता है, जहां कार्यवाही विभाग द्वारा ही शुरू की गई थी और अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया गया था। उक्त अनुपात वहां लागू नहीं होगा जहां पीड़ित पक्ष ही आपराधिक अभियोजन की शुरुआत करता है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अंश निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत हैं:

> *"31. वर्तमान मामले के तथ्यों से यह स्पष्ट है कि विभागीय जांच, जो आपराधिक कार्यवाही शुरू होने के बाद पूरी हुई, अर्थात् प्राथमिकी दर्ज होना, दोनों अलग-अलग मुद्दे हैं। राधेश्याम केजरीवाल और लोकेश कुमार जैन (पूर्वोक्त) का निर्णय इससे भी भिन्न है कि जहां विभाग द्वारा शुरू की गई विभागीय कार्यवाही अभियुक्त को दोषमुक्त करती है; वहीं तथ्यों के आधार पर विभाग आपराधिक मुकदमा नहीं चला सकता। इस मामले में, आपराधिक वाद विभाग द्वारा नहीं, बल्कि पीड़ित द्वारा चलाया गया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के पहले तर्क को तदनुसार खारिज किया जाता है।"*
>
> (ज़ोर दिया गया)

17. यह ध्यान देने योग्य है कि ***रणबीर एस. अरोड़ा*** (पूर्वोक्त) मामले में, जैसा कि वर्तमान मामले में, विभागीय कार्यवाही से पहले प्राथमिकी दर्ज की गई थी, उसी के संबंध में, न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

> *"23. वर्तमान प्राथमिकी पहले की गई है; विभागीय कार्यवाही बाद में की गई है। याचिकाकर्ता विभागीय कार्यवाही में प्राप्त निष्कर्ष का सहारा नहीं ले सकता, भले ही वह उसके पक्ष में हो, क्योंकि प्राथमिकी*

विभागीय जांच से पहले की गई है; वह 23.09.2011 की जांच रिपोर्ट की मजबूती या कमजोरी के आधार पर 03.10.2009 की प्राथमिकी को अभिखंडित करने की मांग नहीं कर सकता है।"

(ज़ोर दिया गया)

18. ***राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) बनाम अजय कुमार त्यागी*** (2012) 9 एससीसी 685 में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में दोषमुक्ति से आपराधिक मामले में अभियुक्त स्वतः दोषमुक्त नहीं हो जाता, इस संबंध में निम्नलिखित अनुच्छेद शिक्षाप्रद हैं:

"24. .. वास्तव में, ऐसे उदाहरण हैं, जिनका उल्लेख हमने ऊपर किया है, जो स्पष्ट रूप से विपरीत दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं, अर्थात् विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्ति से किसी आपराधिक मामले में दोषमुक्ति या दोषमुक्ति नहीं हो जाती। सिद्धांततः भी यह दृष्टिकोण हमारी सराहना करता है। यह सुस्थापित है कि किसी विभाग की कार्यवाही में सबूत का मानक आपराधिक अभियोजन की तुलना में कम है। यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि विभागीय कार्यवाही या उस मामले के लिए आपराधिक मामलों का निर्णय केवल उसमें दिए गए सबूतों के आधार पर किया जाना चाहिए। आपराधिक मामले में साक्ष्य की सत्यता का आकलन उसमें साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के बाद ही किया जा सकता है तथा विभागीय कार्यवाही में प्रस्तुत साक्ष्य या उन साक्ष्यों पर आधारित जांच अधिकारी की रिपोर्ट के आधार पर आपराधिक मामले को खारिज नहीं किया जा सकता।

25. इसलिए, हमारी राय है कि विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्ति के परिणामस्वरुप वास्तव में आपराधिक अभियोजन को अभिखंडित नहीं किया जाएगा। हालांकि, हम यह जोड़ना चाहते हैं कि यदि किसी

अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन केवल कार्यवाही में प्राप्त निष्कर्ष पर आधारित है और उस निष्कर्ष को पदानुक्रम में उच्चतर प्राधिकारी द्वारा अपास्त कर दिया जाता है, तो मूल आधार ही नष्ट हो जाता है और अभियोजन को अभिखंडित किया जा सकता है।लेकिन यह सिद्धांत विभागीय कार्यवाही के मामले में लागू नहीं होगा क्योंकि आपराधिक विचारण और विभागीय कार्यवाही दो अलग-अलग संस्थाओं द्वारा आयोजित की जाती है। इसके अलावा, वे एक ही पदानुक्रम में नहीं हैं।"

(ज़ोर दिया गया)

19. यह ध्यान देने योग्य है कि ***आशु सुरेन्द्रनाथ तिवारी बनाम सीबीआई*** (पूर्वोक्त) मामले में भी आपराधिक कार्यवाही में आरोपमुक्ति, भ्रष्टाचार और अन्य आर्थिक अपराधों के आरोप पर आधारित केंद्रीय सतर्कता आयोग की रिपोर्ट के आधार पर की गई थी।

20. यह उल्लेखनीय है कि ***राधेश्याम केजरीवाल*** (पूर्वोक्त) और ***जॉनसन जैकब*** (पूर्वोक्त) के मामले में भी विभाग/सतर्कता कार्यवाही में नियोक्ता द्वारा शुरू किए गए भ्रष्टाचार के आरोप शामिल थे। इस मामले में पूर्णतः विपरीत बात यह है कि, यौन उत्पीड़न के लिए पीड़िता के कहने पर आईसीसी की कार्यवाही शुरू की गई थी, तथा इसका परिणाम एक ऐसे निर्णय के रूप में सामने आया जो अपील में लंबित है। दर्ज प्राथमिकी के अनुसार आरोप अलग-अलग लगाए गए हैं, जो अब आरोप-पत्र में परिणत हो गए हैं; इसलिए सामग्री को उसके अपने आलोक में ही देखा जाना चाहिए, न कि आईसीसी के निष्कर्ष के आधार पर उसे खारिज या नजरअंदाज किया जाना चाहिए। आरोपों का

परीक्षण, विचारण के दौरान छान-बीन किए गए प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर किया जाना चाहिए, जो विशिष्ट तथ्यों और साक्ष्यों पर आधारित हों। आईसीसी के निर्णय का उपयोग बिना किसी विचारण के अभियुक्त को सभी दंडात्मक आरोपों से मुक्त करने के लिए नहीं किया जा सकता।

21. तथ्यों की पृष्ठभूमि से, इस स्तर पर, इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि शिकायतकर्ता ने लगातार याचिकाकर्ता द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उत्पीड़न और धमकी की शिकायत की थी, जहां उन्होंने कथित तौर पर शिकायतकर्ता को अपनी मांगों को स्वीकार करने के लिए मजबूर करने के लिए अपने प्रभाव का इस्तेमाल किया था। इन आरोपों में उसे धमकियों के माधयम से डराने-धमकाने का आरोप भी शामिल है, जिसका, कहने की जरूरत नहीं है, विचारण के दौरान मूल्यांकन किया जाएगा।

22. उच्चतम न्यायालय ने ***राजस्थान राज्य बनाम बी.के. मीणा*** (1996) 6 एससीसी 417 में, यद्यपि भिन्न संदर्भ में, आपराधिक मामले के समापन तक अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाने की प्रार्थना पर निर्णय लेते हुए, आपराधिक मुकदमे की तुलना में अनुशासनात्मक कार्यवाही के संबंध में निम्नानुसार स्पष्टीकरण दिया था:

> "*17. इसका एक और कारण भी है। आपराधिक कार्यवाही और अनुशासनात्मक कार्यवाही में दृष्टिकोण और उद्देश्य बिल्कुल भिन्न और अलग होते हैं। अनुशासनात्मक कार्यवाही में, प्रश्न यह है कि क्या प्रत्यर्थी ऐसे आचरण का दोषी है जिसके कारण उसे सेवा से हटाया जाना*

चाहिए या कम सजा दी जानी चाहिए, जैसा भी मामला हो, जबकि आपराधिक कार्यवाही में प्रश्न यह है कि क्या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (और दंड संहिता, 1860, यदि कोई हो) के तहत उसके खिलाफ दर्ज अपराध साबित होते हैं और यदि साबित होते हैं, तो उसको क्या सजा दी जानी चाहिए। दोनों मामलों में सबूत के मानक, जांच का तरीका तथा जांच और विचारण को नियंत्रित करने वाले नियम पूरी तरह से अलग और भिन्न हैं। आपराधिक कार्यवाही लंबित रहने तक अनुशासनात्मक कार्यवाही पर रोक लगाना, एक स्वाभाविक बात नहीं होनी चाहिए, बल्कि एक सुविचारित निर्णय होना चाहिए। यदि एक स्तर पर निर्णय पर रोक लगा भी दी जाए, तो यदि आपराधिक मामले में अनावश्यक देरी हो जाती है, तो निर्णय पर पुनर्विचार की आवश्यकता हो सकती है।"

(ज़ोर दिया गया)

23. प्रतिलिपि के अवलोकन से पता चलता है कि शिकायतकर्ता की बातचीत याचिकाकर्ता द्वारा धमकियों, अवांछित प्रगति और अनुचित व्यावसायिक हस्तक्षेप की पृष्ठभूमि पर आधारित थी, जो प्रथम दृष्टया डीएसईडब्ल्यूयू में याचिकाकर्ता के पद और संगठन में उसके प्रभाव का बड़े पैमाने पर दुरुपयोग प्रतीत होता है।

24. आईसीसी के निष्कर्ष अभियुक्तों को दोषमुक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे, क्योंकि उनके विरुद्ध अपील की गई है तथा उन्हें खारिज किया जा सकता है।

25. 28 फरवरी 2018 को विचारण पर रोक लगा दी गई और मामला अधर में लटका हुआ है। याचिकाकर्ता को विधि के अनुसार, विचारण के दौरान अपनी तर्क साबित करने का अधिकार होगा।

26. प्रतिलिपि के आधार पर, याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि प्रत्यर्थी संख्या 2 एक उचित नौकरी पाने के लिए इन आरोपों को लगाकर ब्लैकमेल करने की कोशिश कर रही थी, हालांकि, इन प्रतिलिपियों को पढ़ने पर यह स्पष्ट नहीं होता है। बल्कि प्रत्यर्थी संख्या 2 ने प्रतिलिपियों में कहा है कि पेशेवर लाभ के ऐसे प्रस्ताव उसे अपनी शिकायत वापस लेने के लिए लुभाने के लिए दिए गए थे और तदनुसार उसने इन्हें अस्वीकार कर दिया था।

27. यह ध्यान देने योग्य है कि नितिन (पूर्वोक्त) में न्यायालय का निर्णय उसके समक्ष मौजूद तथ्यों पर आधारित है। अभियुक्त पर धारा 304/323 के तहत आरोप लगाए गए थे, जबकि वर्तमान मामले में इस न्यायालय के समक्ष दर्ज प्राथमिकी में यौन दुराचार और आपराधिक धमकी के अपराधों का आरोप लगाया गया है। इसके अलावा, नितिन (पूर्वोक्त) में निर्णय इस न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के चरण में अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में दिया गया था जबकि वर्तमान मामला संज्ञान के बाद समन आदेश को अपास्त करने के लिए इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का आह्वान करता है। नितिन (पूर्वोक्त) मामले में, धारा 164 दं.प्र.सं. के तहत बयान में शिकायतकर्ता द्वारा नामित

अभियुक्त व्यक्तियों को देरी से शामिल किए जाने के अभाव में, कथित अपराध में उनकी संलिप्तता को दर्शाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सबूत नहीं था।

28. इस बीच, वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रत्यर्थी द्वारा दर्ज की गई लगातार और लंबे समय से चली आ रही शिकायतों, प्रतिलिपियों और विभिन्न अन्य साक्ष्यों पर विचार करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता है कि कथित अपराध में याचिकाकर्ता की संलिप्तता की संभावना को इंगित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है। प्रत्यर्थी द्वारा दायर विभिन्न प्रशासनिक शिकायतों में, उसने याचिकाकर्ता के विरुद्ध यौन दुराचार की अपनी शिकायत लगातार कायम रखी है। अंत में, नितिन (पूर्वोक्त) मामले में छह प्रत्यक्षदर्शी थे जिन्होंने कहा कि अभियुक्त अपराध स्थल से अनुपस्थित था, उनकी गवाही सीधे तौर पर शिकायतकर्ता की गवाही के मूल पर चोट करती है। इस मामले में अभी विचारण शुरू होना बाकी है।

29. राज्य बनाम ओम प्रकाश 2017 एससीसी ऑनलाइन डेल 11272 में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने स्पष्ट किया कि प्राथमिकी मामले का विश्वकोश नहीं है और प्राथमिकी में अभियुक्त का नाम न होना महत्वपूर्ण हो सकता है, लेकिन अपराध में अभियुक्त की भागीदारी का निष्कर्ष निकालने के लिए पूरे तथ्यात्मक परिदृश्य की जांच की जानी चाहिए, उक्त निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार उद्धृत हैं:

"9. यह स्थापित कानूनी प्रस्ताव है कि प्राथमिकी पूरे मामले का विश्वकोश नहीं है। हो सकता है कि इसमें सभी विवरण शामिल न हों और ऐसा होना भी आवश्यक नहीं है। इसमें अभियुक्त का नाम देना महत्वपूर्ण हो सकता है, <u>लेकिन प्राथमिकी में अभियुक्त का नाम न देना इसकी विषय-वस्तु पर संदेह करने का आधार नहीं हो सकता, बशर्ते गवाह का बयान विश्वसनीय पाया जाए।</u> न्यायालय को संपूर्ण तथ्यात्मक परिदृश्य की जांच करने के बाद यह निर्धारित करना होता है कि क्या व्यक्ति अपराध में शामिल हुआ है या उसे झूठा फंसाया गया है। <u>तथ्यों से पूरी तरह परिचित सूचना देने वाले के पास पूरी घटना का ब्यौरा बिना कुछ भी गायब किए पुन: पेश करने के लिए आवश्यक कौशल या क्षमता का अभाव हो सकता है।</u> कुछ लोग इसके वर्णन में सबसे महत्वपूर्ण विवरण भी भूल सकते हैं। इसलिए, यदि सूचना देने वाला प्राथमिकी में किसी विशेष अभियुक्त का नाम दर्ज करने में विफल रहता है, तो अकेले इस आधार पर मामले का पलड़ा अभियुक्त के पक्ष में नहीं झुक सकता। (के माध्यम से: रोहताश बनाम राजस्थान राज्य (2006) 12 एससीसी 64; और रणजीत सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2011) 4 एससीसी 336: जेटी 2010 12 एससी 167)।"

(ज़ोर दिया गया)

30. ***हजरत दीन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*** 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1781 में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्राथमिकी और धारा 164 दं.प्र.सं. के तहत दिए गए बयान के बीच विसंगतियां बचाव हो सकती हैं, हालांकि, ऐसी विसंगतियां विचारण शुरू किए बिना आरोप मुक्त करने का आधार नहीं हो सकती हैं।

31. यह बात ध्यान में रखनी होगी कि शिकायतकर्ता ने विभिन्न समय पर अनेक शिकायतें दर्ज कराई थीं तथा उसकी स्थिति केवल एक शिकायत पर

आधारित नहीं है। वह विभाग में एक कनिष्ठ कर्मचारी थी जबकि याचिकाकर्ता एक बहुत वरिष्ठ संघ नेता था। किसी भी संदेह या असंगति की स्थिति में इस पदानुक्रम को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान चरण में शिकायतकर्ता के पक्ष में अनुमान लगाया जाना चाहिए।

32. इस संबंध में उच्चतम न्यायालय और इस न्यायालय की समन्वय पीठों के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया जाता है::

i. ***भारत संघ बनाम मुद्रिका सिंह*** (2022) 16 एससीसी 456 में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में कार्यस्थलों में संचालित शक्ति गतिशीलता पर ध्यान दिया:

> "*44. इससे पहले कि हम अपना विश्लेषण पूर्ण करें, हम लागू सेवा नियमों की अति-तकनीकी व्याख्याओं के आधार पर यौन दुराचार की जांच करने वाली कार्यवाही को अमान्य ठहराने की बढ़ती प्रवृत्ति पर भी प्रकाश डालना चाहेंगे। उदाहरण के लिए, कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013 यौन प्रकृति के कई कदाचारों को दंडित करता है और सभी सरकारी और निजी संगठनों पर इसके निवारण के लिए पर्याप्त व्यवस्था करने का आदेश देता है। हालांकि, यदि अपीलीय तंत्र प्रक्रिया को दंड में बदल देता है, तो परिवर्तनकारी कानून का अस्तित्व यौन उत्पीड़न से पीड़ित व्यक्तियों की सहायता नहीं कर सकता है। यह महत्वपूर्ण है कि न्यायालय यौन उत्पीड़न के विरुद्ध अधिकार की भावना को कायम रखें, जो संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत सभी व्यक्तियों को उनके जीवन के अधिकार और सम्मान के अधिकार के तहत प्राप्त है। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से जुड़ी शक्ति की गतिशीलता के प्रति सचेत रहना भी महत्वपूर्ण है। ऐसे कई विचार और बाधाएं हैं जिनका सामना यौन उत्पीड़न से पीड़ित*

<u>एक अधीनस्थ को तब करना पड़ता है जब वे अपने वरिष्ठ के यौन दुर्व्यवहार की रिपोर्ट करने पर विचार करते हैं।"</u>

(ज़ोर दिया गया)

ii. ***राशि बनाम भारत संघ*** 2020 एससीसी ऑनलाइन डेल 1555 में इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने आईसीसी कार्यवाही के गठन/संचालन में शामिल सिद्धांतों का सारांश देते हुए किसी संगठन में वरिष्ठ सदस्यों के प्रभाव से निष्पक्ष होने वाली कार्यवाही की आवश्यकता पर जोर दिया। उक्त निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार उद्धृत किए गए हैं:

"*24. ऊपर उद्धृत निर्णयों के अवलोकन से पता चलता है कि आईसीसी में कार्यवाही के गठन/संचालन के संबंध में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा निम्नलिखित व्यापक सिद्धांत निर्धारित किए गए हैं:*

i)*आईसीसी के सदस्य निष्पक्ष होने चाहिए अर्थात उन्हें मामले में कोई व्यक्तिगत जानकारी या रुचि नहीं होनी चाहिए या किसी भी तरह से मामले से जुड़े नहीं होने चाहिए;*

ii) *<u>आईसीसी के सदस्यों का इसमें शामिल किसी भी पक्षकार से टकराव नहीं होना चाहिए;</u>*

iii) *<u>कार्यवाही में पूर्ण तटस्थता का पालन किया जाना है;</u>*

iv) *<u>कार्यवाही के संचालन में निष्पक्षता बनाए रखी जानी चाहिए;</u>*

v) *<u>किसी भी पक्षकार के प्रति या उसके विरुद्ध पक्षपात का कोई कारण नहीं होना चाहिए;</u>*

vi) *आईसीसी के सदस्यों की साख दोषरहित होनी चाहिए;*

vii) *आईसीसी को न्याययुक्त और निष्पक्ष तरीके से सहायता, सलाह देने और सहायता करने के लिए आईसीसी में स्वतंत्र सदस्यों की आवश्यकता है;*

viii) *एक स्वतंत्र व्यक्ति वास्तव में कोई बाहरी व्यक्ति होना चाहिए और उदाहरण के लिए, ऐसी स्थिति में, जहां शिकायतकर्ता और प्रत्यर्थी बैंक के कर्मचारी हों, यह बैंक का पैनल अधिवक्ता नहीं हो सकता है;*

ix) *<u>आईसीसी पर वरिष्ठों की ओर से कोई अनुचित दबाव और प्रभाव नहीं होना चाहिए;</u>*

x) ऐसे मामलों में जहां मामले के शीर्ष पर रहे व्यक्ति स्वयं शिकायत में प्रत्यर्थीगण हैं, आईसीसी उनकी पसंद का या उनके अधीन काम करने वाले व्यक्तियों में से कोई नहीं हो सकता है;

xi) *आईसीसी को यौन उत्पीड़न की शिकायतों से निपटने के लिए एक स्पष्ट और सटीक प्रक्रिया का पालन करना चाहिए;*

xii) *नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का निष्ठापूर्वक पालन किया जाना चाहिए;*

xiii) *कार्यवाही में शिकायतकर्ता को आत्मविश्वास और आश्वासन मिलना चाहिए और उसे सहज महसूस होना चाहिए;*

xiv) *विशाखा (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत और दिशानिर्देश, कानून के अधिनियमित होने के बाद भी, इन समितियों के गठन का मार्गदर्शन करते रहेंगे। उक्त सिद्धांतों का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए न कि कर्मकांड के रूप में;*

(xv) *महिलाओं को सहानुभूति या दया की पात्र नहीं बनाया जाना चाहिए, बल्कि जो शिकायतकर्ता अपराधी की परवाह*

किए बिना अवांछित व्यवहार के खिलाफ बोलने का साहस करती है, ये वह उत्तरजीवी है।

(xvi) *जांच कार्यवाही से न्यायालय का विश्वास बढ़ना चाहिए।*

*25. विशाखा (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित तथा ऊपर दिए गए विभिन्न निर्णयों के अनुसार आईसीसी के गठन का अंतर्निहित उद्देश्य यह है कि जांच निष्पक्ष और उचित होनी चाहिए। उक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए, आईसीसी को एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष निकाय होना चाहिए। आईसीसी की तटस्थता सुनिश्चित करने के लिए आईसीसी में बाहरी सदस्यों की नियुक्ति की जाती है। यदि मंत्रालयों/विभागों में कार्यरत वरिष्ठ स्तर के अधिकारियों के विरुद्ध शिकायतें की जाती हैं, जिनका अपने अधीनस्थों पर अत्यधिक प्रभाव होता है, तो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि शिकायतों की पूरी तरह निष्पक्ष तरीके से जांच की जाए। सदियों पुरानी कहावत कि **'न्याय न सिर्फ होना चाहिए, बल्कि न्याय होते हुए दिखना भी चाहिए'** इस संदर्भ में सटीक बैठती है।"*

(जोर दिया गया)

iii. ***रुचिका सिंह छाबड़ा बनाम एयर फ्रांस इंडिया*** 2018 एससीसी ऑनलाइन डेल 9340 में इस न्यायालय की खंडपीठ ने कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से जुड़े मामलों से निपटने में बरती जाने वाली संवेदनशीलता को ध्यान में रखा, प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार उद्धृत किए गए हैं:

"31. *यह न्यायालय यहाँ इस बात पर जोर देना चाहता है कि विशाखा दिशानिर्देशों को गंभीरता से लिया जाना चाहिए, और उनका अनुष्ठानिक तरीके से पालन नहीं किया जाना चाहिए। यौन उत्पीड़न और इसके घातक प्रभावों के मुद्दे पर जागरूकता और*

संवेदनशीलता की ओर हमारे समाज की यात्रा, जिसकी शुरुआत विशाखा (पूर्वोक्त) में हुई थी, 17 वर्षों के बाद पथप्रदर्शक कार्यस्थल उत्पीड़न निषेध अधिनियम में परिणत हुई। आज भी, दुनिया भर में विभिन्न कार्यस्थलों पर महिला सहकर्मियों के यौन उत्पीड़न की भयावह कहानियां सुनने को मिलती हैं। निर्णयकर्ताओं, संसद, न्यायालयों और नियोक्ताओं को यह सुनिश्चित करने में सदैव सतर्क रहना होगा कि न्याय सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी नीतियों का शीघ्रतापूर्वक और निष्पक्ष रूप से क्रियान्वयन हो तथा यह भी सुनिश्चित किया जाए कि किसी को भी अवांछित - और अस्वीकार्य व्यवहार का सामना न करना पड़े। व्यक्ति के अनुशासनहीनता के छिटपुट मामलों के विपरीत, जिनसे नियमित रूप से निपटा जाता है, नियोक्ताओं पर इन कानूनों और नियमों के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने का प्राथमिक दायित्व है, जिसका उद्देश्य उनकी महिला कर्मचारियों के लिए सुरक्षित कार्यस्थल सुनिश्चित करना है। एक मामले में कार्यान्वयन में अनुमति या उल्लंघन, नियोक्ता की इच्छाशक्ति की कमी, या अपने कार्यस्थल पर ऐसी सुरक्षा और समानता सुनिश्चित करने में असमर्थता को दर्शाता है। एक शिकायतकर्ता जो अपराधी की परवाह किए बिना अवांछित व्यवहार के विरुद्ध बोलने का साहस करता है, वह केवल दया या सहानुभूति का पात्र नहीं है, बल्कि जैसा कि एलेक्स एले ने कहा है:

> *"आप अपनी कहानी साझा करने के लिए पीड़ित नहीं हैं।*
>
> *आप अपनी सच्चाई से दुनिया में आग लगाने वाले उत्तरजीवी हैं। और आप कभी नहीं जानते कि आपकी रोशनी, आपकी गर्मी, और प्रचंड साहस की आवश्यकता किसे है ..."*

32. और हम सब पर - नियोक्ता, न्यायालय और समग्र समाज पर - यह दायित्व है कि हम इस तरह के पूरी तरह से अस्वास्थ्यकर व्यवहार को जड़ से उखाड़ फेंकें।

(ज़ोर दिया गया)

33. यह उल्लेख करने योग्य है कि वर्तमान याचिका विचारण के बहुत ही प्रारंभिक चरण में दायर की गई है और इसमें केवल संज्ञान लेने और याचिकाकर्ता को समन भेजने के आदेश को अभिखंडित करने की प्रार्थना की गई है।

34. उपरोक्त चर्चा और मूल्यांकन के आलोक में, इस याचिका को लंबित आवेदनों के साथ खारिज किया जाता है।

35. निर्णय इस न्यायालय की वेबसाइट पर अपलोड किया जाए।

(अनीश दयाल)
न्यायाधीश

11 सितंबर, 2024/एसएम/*केपी*

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*